Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. IV, Issue VIII, October-2012, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

ब्रिटिश शासन की भारतीय दस्तकारी के प्रति नीती

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. IV, Issue VIII, October-2012, ISSN 2230-7540

ब्रिटिश शासन की भारतीय दस्तकारी के प्रति नीती

Dr. Raj Kumar

Ph.D. (History), NET

परमपरागत अर्थव्यवस्था का विघटन–ब्रिटिश शासन की स्थापना से पूर्व भारत एक सम्पन्न एवं आत्मनिर्भर देश था। देश की अधिकांश जनता कृषि से सम्बन्धित थी तथा ग्रामों में निवास करती थी। ग्रामों में परम्परागत स्वावलम्बी अर्थव्यवस्था का प्रचलन था। ग्राम स्वतंत्र अर्थिक इकाईयों के रूप में विद्यमान थे जो अपनी आवश्यकता की लगभग सभी वस्तुओं का उत्पादन स्वयं कर लेते थे। किन्तु भारत में ब्रिटिश प्रभुत्व की स्थापना के परिणामस्वरूप ग्रामों की आत्म–निर्भरता समाप्त होने लगी। परम्परागत व्यवस्था का विघटन होने लगा और इसका स्थान 'औपनिवेशिक अर्थव्यवस्थाष ग्रहण करने लगी। नीवन अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत किसानों को भू–राजस्व का भुगतान नकद धनराशि के रूप में करना पड़ता था, अतः वे उन फसलों के उत्पादन में अधिक रुचि लेने लगे जिन्हें बाजार में सरलतापूर्वक बेचकर धन प्राप्त किया जा सकता था। वस्तुतः ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप ब्रिटेन की आर्थिक आवश्यकता के अनुसार निर्धारित किया गया। ब्रिटेन को अपनी कारखानों के लिए कच्चे माल की आवश्यकता थी और तैयार माल को बेचने के लिए विशाल बाजारों की। अतः शासकों ने भारतीय बजारों को ब्रिटेश माल से भर दिया और भारत भूमि को कच्चा माल उत्पन्न करने का साधन बना डाला।

निःसन्देश अंग्रेजो की भारत विजय इतिहास की एक विलक्षण एवं अभूतपूर्व घटना थी। अंग्रेजो से पहले भारत में अपनी शासनसत्ता स्थापित करने वाले तुर्क और मुगल विजेताओं ने भारतीय राजनैतिक शक्तियों को तो उखाड़ फेका था किन्तु उन्होंने देश के परम्परागत आर्थिक ढाँचे में कोई मौलिक परिवर्तन नहीं किया था। उन्होंने ग्रामों की आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था को ज्यों का त्यों बनाए रखा। उनके शासन काल में किसानों, कारीगरों और व्यापारियों को अपने वंशानुगत व्यवसायों से वंचित नहीं होना पड़ा। धीरे–धीरे वे स्वयं ही भारतीय जी–जीवन, देश की राजनैतिक एवं आर्थिक व्यवस्थाओं के महत्वपूर्ण अंग बन गये। अतः भारतीय जन सामान्य के लिए शासन–सत्ता के परिवर्तन का तात्पर्य था मात्र उन कर्मचारियों एवं अधिकारियों का परिवर्तन जो किसानों से भू–राजस्व की वसूली करते थे। किन्तु अंग्रेज भारत में सदैव विदेशी व्यापारी ही बने रहे। उन्होंने भारत को अपना देश समझा ही नहीं। देश से वसूल किये गये कर विदेशी हितों और आर्थिक संस्साधनों को रक्षा एवं उन्नति के लिए खर्च जाते रहे जिसे दुःखद परिणाम जनसमान्य की दरिद्रता एवं विपन्नता के रूप में प्रकट हुए। निःसन्देह ब्रिटिश शासन ने प्रत्येक सम्भव उपाय द्वारा प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से भारत का शोषण किया भारत सरकार की राजस्व वसूली का लगभग 50 प्रतिशत किसी न किसी रूप में ब्रिटेन पहुँच जाता था। मद्रास ब्रिटिश राजस्व विभाग के अध्यक्ष जान स्लीवान ने स्वयं यह स्वीकार किया था कि श भारत के प्रति अपनायी गई हमारी नीति स्पंज के समान कार्य करती है, जो गंगा के किनारे की समस्त उत्तम पदार्थ को सोखकर उन्हें थेम्स के किनारे निचोड़ देती है।"

दस्तकारों एवं शिल्पकारों का विनाश

अंग्रेजों के भारत आगमन से पूर्व शिल्प और व्यवसाय की दृष्टि से भारत का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान था। भारत में तैयार हुए माल की विदेशों में पर्याप्त मांग थी। किन्तु भारत में ब्रिटिश प्रभुसत्ता स्थापित होते ही भारतीय शिल्प एवं उद्योग–धंधे ह्रास की ओर बढ़ने लगे। वस्तुतः अंग्रेज भारत को एक कृषि प्रधान देश बना देना चाहते थे ताकि यहां से इंग्लैंड के कारखानों के लिए पर्याप्त कच्चामाल सस्ते मूल्य से प्राप्त किये जा सके और तैयार माल अधिक लाभ पर बेचा जा सके। अतः उन्होंने प्रत्येक सम्भव उपाय से भारतीय शिल्पो एवं उद्योग धन्धों को निरुत्साहित करना आरम्भ कर दिया।

भारत में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रभुत्व की स्थापना के समय भारत के परपरागत हस्तकला उद्योग तथा दस्ताकारियाँ अत्यधिक उन्नत अवस्था में की । 1918 ई0 में प्रथम भारतीय औद्योगिक कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में स्वीकार किया था कि श्जब आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का जन्म स्थान पश्चिमी यूरोप में असभ्य जातियाँ निवास करती थी, तब भारत अपने शासकों के वैभव तथा शिल्पकारो की उच्च कोटि का कलात्मक कारीगरों के लिए विख्यात था। और काफी समय बाद भी, जब पश्चिम से साहसी सौदागर पहली बार भारत पहुँचे, तब भी इस देश का औद्योगिक विकास किसी भी रूप में यूरोप के विकसित देशों से कम नहीं था।"

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रभुत्व की स्थापना के समय भारत के अपने सूती वस्त्र उद्योग के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध था। 17 वीं शताब्दी के अन्तिम दशक तक पहुँचते–2 ब्रिटेन में भारतीय सूती वस्त्रों को व्यापक प्रचलन हो गया था। सुप्रसिद्ध उपनयासकार डेनियल डेफो ने अपने उपनयास 'राबिन्सन क्रूसोष में लिखा था–'भारतीय वस्त्र हमारे कमरों तथा हमारे शयनागरों में भी प्रवेश कर चुके हैंय पर्दे, गद्दे, कुर्सियाँ और यहाँ तक कि हमारे बिस्तर भी मलमल अथवा अन्य भारतीय वस्त्रों के अतिरिक्त और कुछ नहीं रहेष। भारत के सूती, रेशमी और ऊनी वस्त्रों की विश्वभर में व्यापक मांग थी। ढाका की मलमल, लाहौर के गलीचे, कशमीर के शाल, बनारस की जरी का काम आदि दूर–दूर तक प्रसिद्ध था। कताई और बुनाई राष्ट्रीय उद्योग थे तथा लाखों लोगों की आजिविका के साधन थे। अकेले बंगाल प्रेसीडेन्सी के शाहबाद जिले में लगभग एक लाख बुनकर थे। बंगाल प्रेसीडेन्सी का लगभग 95 प्रतिशत सूती वस्त्र दूसरे देशों को निर्यात किया जाता था। कृष्णनगर, चन्देरी, अरनी, बनारस आदि सुप्रसिद्ध वस्त्रोद्योग केन्द्र थे। अहमदाबाद के धोतियों और दुपट्टों, लखनऊ की चिकन और नागपुर के सिल्क

बार्डर की दूर–दूर तक माँग थी। मुर्शिदाबाद, मालदा तथा बंगाल के अनेक कस्बों में उच्च कोटि का सिल्क तैयार किया जाता था। कश्मीर, पंजाब और पश्चिमी राजस्थान ऊनी वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध थे।

वस्त्र उद्योग के अतिरिक्त अन्य उद्योग उन्नत अवस्था में थे। मुरादाबाद, अलीगढ़ और बनारस में पीतल, कांसे और तांबे के सुन्दर एवं आकर्षक बर्तन बनाये जाते थे। नासिक, पूना, हैदराबाद, विशाखापट्नम और तंजौर धातु–कर्म के लिए प्रसिद्ध थे। कच्छ, सिन्ध और पंजाब हथियारों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध थे। गौरखपुर, आगरा, चित्तौण, कोल्हापुर, सतारा और बालाघाट में शीशे की उन्नत उद्योग थे। साने, चांदी और हीरे, जवाहरात से उत्तमकोटि के आभूषण बनाने के काम देश में अनेक स्थानों पर किया जाता था।

19 वीं शाताब्दी के प्रारंभ तक भारतीय उद्योगों एवं दस्तकारियों का पतन होने लगा। इसके अनेक प्रमुख कारण थे।

1. कम्पनी के व्यापरिक एकाधिकार की समाप्ती– 1813 ई0 के चार्टर एक्ट ने ब्रिटिश ईस्ट कं0 के भारत के साथ भारत के साथ व्यापार करने के एकाधिकार को समाप्त करके सभी ब्रिटिश प्रजाजनों को भारत से व्यापार करने का अधिकार प्रदान कर दिया। इसके परिणाम स्वरूप देश का आर्थिक शोषण करने वालों की संख्या में अपार वृद्धि हो गई। ब्रिटेन की मशीन निर्मित वस्तुएँ (विशेष रूप से सूती और रेशमी वस्त्र) विशाल मात्रा में भारत आने लगी। जिससे भारतीय उद्योग–धंधो की असीम हानि हुई।

2. मशीन निर्मित उत्पादनों का सस्ता एवं आकर्षक होना– ब्रिटेन में मशीनों से बनाये गये वस्त्र भारत में हथकरघे द्वारा बुने गये वस्त्रों से अधिक आकर्षक एवं सस्ते होते थे। परिणामस्वरूप भारतीय बाजारों में ब्रिटिश विर्निमित उत्पादनों से विशेषरूप से सूती वस्त्रों की मांग में दिन–प्रतिदिन वृद्धि होने लगी। परम्परागत तकनीक और हाथ से बनाये जाने वाली भारतीय वस्तुएँ भाप से चलने वाली शक्तिशाली मशीनों द्वारा विशाल पैमाने पर बनाई जाने वाली वस्तुओं की प्रतिद्धन्द्धिता में नहीं ठहर सकी। अतः भारतीय उद्योग धन्धों का विनाश अवश्यभावी हो गया।

3. रेलों द्वारा सुदूरवर्ती स्थानों में माल पहुँचाना– रेलों के प्रचलन ने भारतीय उद्योगों के पतन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। रेलों द्वारा मशीन निर्मित ब्रिटिश सुदूर ग्रामों में भी सरलतापूर्वक पहुँचने लगा। इससे जहाँ एक ओर ग्रामों की स्वालम्बी अर्थव्यवस्था का विनाश हुआ वहीं दूसरी ओर भारतीय उद्योग–धन्धों का ह्रास भी प्रारम्भ हो गया। भारतीय कुटीर उद्योगों द्वारा बनाई गयी वस्तुओं की मांग धीरे–धीरे कम होने लगी तथा मशीन निर्मित उत्पादनों के प्रयोग में वृद्धि होने लगी। अतः जैसा कि अमरीकी लेखक डी.एच. बुकानन ने लिखा है–श्अलग–थलग रहने वाले स्वावलम्बी ग्राम के कवच की इस्पात की रेल में बेंध दिया तथा उसकी प्राणशक्ति को क्षीण कर दिया"

4. कारीगिरी एवं शिल्पकारों का शोषण– बंगाल का स्वामी बनते ही कम्पनी के कर्मचारियों ने भारतीय कारीगरों एवं शिल्पकारों को अपने शोषण का शिकार बनाना प्रारम्भ कर दिया। वे बंगाल के कारीगरी, जो सूती व रेशमी वस्त्रों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध थे, की ऊँची कीमत पर कच्चा माल देते थे तथा उन्हें निश्चित समय में निश्चित मात्रा में, निश्चित स्तर की बनी हुई वस्तुऐं देने के लिए विवश करते थे। कारीगरों को अपने निर्मित माल की बाजार मूल्य से काफी कम कीमत प्राप्त होती थी। इस नीति के परिणाम स्वरूप वस्त्र उद्योग एक अलाभकारी व्यवसाय बन गया। हजारों कारीगरों ने अपना पैतृक व्यवसाय छोड़ दिया जिससे यह उद्योग पतन की ओर बढ़ने लगा। लोहा, मिट्टे के बर्तन, शीशा, कागज, धातु, बन्दूक, जहाजरानी, तेलधानी, चमड़ा–शोधन और रंगाई आदि उद्योगों की दशा भी दयनीय हो गई। ढाका, सूरत, मुर्शिदाबाद जैसी समृद्ध उद्यौगिक केन्द्र निर्जन हो गये। 19 वीं शताब्दी के अंक तक नगर जनसंख्या सम्पूर्ण जनसंख्या का केवल 10 प्रतिशत रह गयी थी। जैसे–जैसे कम्पनी की प्रभुसत्ता में विस्तार होता गया वैसे–वैसे देश के अन्य भागों उद्योग–धन्धे भी पतन की ओर बढ़ने लगे।

5. भारतीय उत्पादों पर भारी कर– इंग्लैड में भारतीय वस्त्रों को निरुत्साहित करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने भी उन पर भी भारी कर लगा दिया। उदाहरणार्थ 1840 ई0 में भारतीय वस्त्रों के आयात पर 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक सीमा शुल्क लगाया जाता था, किन्तु भारत में इंग्लैड के सूती एवं रेश्मी पर केवल 3 प्रतिशत और ऊनी वस्त्रों पर 2 प्रतिशत सीमा शुल्क लिया जाता था। इससे भारतीय वस्त्रों के निर्यात को भंयकर आघात लगा। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार ने अपने उद्योग धन्धों की रक्षा के लिए भारतीय उद्योग धन्धों का गला घोंट दिया। **एच.एच. लिसन के शब्दों में**–श यदि ऐसा न होता पैसले व मानचेस्टर की मिलें अपने प्रारम्भिक दिनों में बन्द हो जातीं और फिर कदाचित् भाप की शक्ति भी उन्हें न चला पाती। उनका निर्माण भारत की बनी वस्तुओं की बली चढ़ाकर ही किया गया।.....ब्रिटेन का माल किस प्रकार का शुल्क चुकाए बिना भारत पर लाद दिया गया और विदेशी उत्पादक ने अपने उस प्रतियोगिता को दबा रखने के और आखिकार उसका गला घोंअने के लिए राजनैतिक अन्याय का सहारा लिया जिसका समानता की शर्तों पर नहीं कर सकता था।" इस नीति के परिणामस्वरूप भारत के हाथ से न केवल एशिया और यूरोप के विदेशी बाजार ही निकल गए अपितु उसके अपने बाजार भी यन्त्र निर्मित सस्ते माल से भर गए। 1850 ई0 तक पहुँचते–पहुँचते भारत वस्त्र व्यापार के एक महान निर्यातक देश के स्थान से वंचित होकर स्वयं एक आयातक देश बन गया और ब्रिटेन के समस्त व्यापार का एक चौथाई भाग में ही खपने लगा। कार्ल मार्क्स ने यथार्थी ही लिखा है कि–श यह अंग्रेज घुसपैठियां था जिसने भारतीय खड्डी और चरखों को तोड़ दिया।"

6. देशी शासकों एवं राजदरबारों का विनाश–भारत में ब्रिटिश प्रभुसत्ता की स्थापना की एवं विस्तार के साथ–साथ देशी राजाओं एवं राजदरबारों का लोप होने लगा। देशी और राजदरबार शहरी हस्तशिल्प की वस्तुओं के महत्वपूर्ण ग्राहक थे। उनके विनाश से उच्च कोटि के हस्तशिल्पों के उत्पादनों की माँग समाप्त होने लगी। उदाहरण के लिए ब्रिटिश प्रभुसत्ता की स्थापना से पूर्व भारत में अस्त्र–शस्त्र निर्माण उद्योग एक विस्तृत उद्योग था। देशी राज्य और सरदर अपनी सैनिक आवश्यकताओं की पूत्रि देश में निर्मित अस्त्र–शस्त्र से ही करते थे। किन्तु ब्रिटिश शासक सैनिक अस्त्र–शस्त्र स्वदेश से खरीदते थे। इसके अतिरिक्त भारतीय शासक वर्ग का स्थान ग्रहण करने वाले ब्रिटिश अधिकारी एवं कर्मचारी भारतीय उत्पादन का प्रयोग करना अपनी शान के विरूद्ध समझते थे। अतः उचित संरक्षण एवं प्रोत्साहन के अााव में भारतीय उद्योग की ओर बढ़ने लगे। इस स्थित पर क्षोभ प्रकट करते हुए स्वयं गवर्नर–जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक ने स्वीकार किया था कि श व्यापार वाणिज्य के

www.ignited.in

इतिहास में इस गम्भीर स्थिति का साम्य ढूँढना दुष्कर है। सूती वस्त्र बुनने वालों की अस्थियाँ भारत के मैदानों को सफेद बना रही है।"

7. आधुनिक मशीन उद्योगों को प्रोत्साहन न देना–ब्रिटिश सरकान ने भारत के परम्परागत उद्योगों को तो नष्ट कर दिया किन्तु यहाँ आधुनिक मशीन उद्योगों के प्रारम्भ को किसी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं दिया। सरकार ने 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध को भी किसी प्रकार का संरक्षण नहीं दिया। परम्परागत हस्तशिल्प के विनाश तथा आधुनिक मशीन उद्योगों के अभाव के कारण कारीगर एवं शिल्पकार वैकल्पिक रोजगार प्राप्त करने में असमर्थ हो गए। कालान्तर में जब ब्रिटेन में पूंजी की अधिकता हो गई और उसे अतिरिक्त पूँजी को भारत में नियोजित करना लाभप्रद समझा गया तभी यहाँ ब्रिटिश पूँजीपतियों द्वारा कुछ उद्योगों को प्रारम्भ किया गया। इस क्षेत्र में भी ब्रिटिश सरकार ने उन्हीं उद्योगों को संरक्षण दिया जो ब्रिटेन में प्रारम्भ नहीं किए जा सकते थे। निःसन्देह ब्रिटिश औद्यौगिक नीति ने भारतीय उद्योग धन्धों का विनाश की ओर धकेल दिया।

REFERENCE

1. Anstey, Vera : Economic Development of India

2. Balbushevich V.V. and Dyakov, A.M. (Ed.) : A Contemporary History of India: 1918:55

3. Dutt, R.C. : Economic History of India.

4. Gadgil, D.R. : The Indistrial Evolution of India in Recurs times

5. Kumar, Dharma (Ed) : Combridge Economic History of India, Voll II

6. Pavlov,V.I. : The Indian capitalist Class: A Historical Study.

7. Singh, V.B. (Ed): Economics History of India, 1857-1926.

8. Digby, William : Properous British India.

9. Tomlinson, B.R. : Political Economy of Raj, 1917-47